THE TIMES OF INDIA

Date: 04-09-24

Didi's Drama

Bengal's new anti-rape law is part of meaningless political theatre. It's easier than doing the basic things

TOI Editorials

Bengal assembly unanimously passed the 'anti-rape' bill that includes death penalty for convicts who murder their victims or leave them in a vegetative state. BNS includes death for convicts in similar cases too, included in an amendment to IPC after 2012's Nirbhaya case. Rivals Trinamool, BJP, Congress and Left were of one mind – death to rapists. Why not? Why address issues that contribute to creating the conditions for stranger rape, like unsafe surroundings, poor policing, poorer prosecution? Far easier to push another legislation and pretend it is Enough Action Taken. Such legislation is but optical illusion.

Nab them first | It isn't for lack of law that rape, brutal rape, rape-murder flourish – India a rare country where even society, not just law, has categories for rape and requisite outrage. Perhaps because marital rape is legal? Since "only" rape is largely normalised, the country's rape culture remains unaddressed except by a smattering of NGOs. Death on the statute is one thing, but to arrive at sentencing is an obstacle race that dehumanises those seeking justice. Even for survivors who live to identify attackers, conviction is a paltry 2.6%, as Bengal CM cited as she talked up her bill.

Stranger rape | The call for death to rapists started as stranger rapes saw an uptick – still far fewer (about 7%-10%) compared to reports of sexual assault by people in positions of trust or familiar to the victim. Outrage is selective. Two Dalit teens were found hanging from a tree in UP's Farrukhabad district mere 20 days after the RG Kar crime. The family believes the two were assaulted but officials said swabs were sent "to rule out rape". That isn't how forensics works.

Competitive packaging | Adding laws in the manner Bengal has done is simply a populist measure. Building on what is chillingly called the "nostalgia of outrage". Bengal CM went on to compare "women's safety" in Bengal vs states where BJP is in office – reminders to horror crimes in Hathras and Unnao. There's déjà vu here. Throughout Lok Sabha campaigning, netas made "women's safety" a matter objectified – to be packaged and gift-wrapped to offer voters. It was, like now, a political competition. But no one fixed the lights, or secured the workplace, the school, or looked at the last mile – effective police response. India has laws for everything. But enforcement for very little.

THE HINDU

Date: 04-09-24

Demolition squad

Courts cannot be oblivious to the communal symbolism of the bulldozer

Editorial

In raising questions about the legality of the demolition of houses belonging to alleged offenders, the Supreme Court of India has articulated a valid and widespread concern about the use of the bulldozer as a form of retribution. The targeted demolition of Muslim houses has become part of the governance model in BJP-ruled States and if the Court can end the impunity with which these extra-legal measures are used by those in power, it would be a wholesome intervention. As Justice B.R. Gavai, heading a Division Bench with Justice K.V. Viswanathan, remarked, the law indeed does not permit anyone's home to be demolished just because they are accused in a case, and it cannot happen even in the case of a convict. The judiciary cannot be oblivious to the political symbolism that the bulldozer has acquired as an instrument of collective punishment inflicted on those the authorities label as rioters. There are instances of the houses of named suspects being demolished, without regard to the fact that the rest of the family may have nothing to do with the offence. However, considering that local laws do permit removal of encroachments and unauthorised constructions, the Bench has articulated its intention to lay down uniform guidelines on a pan-India basis to streamline the procedure for action against such structures. Observations by Justice Viswanathan indicate that these may involve the manner in which unauthorised structures are to be identified, notices issued to those concerned and a fair hearing given to them before any action.

It is here that the Court should tread carefully. The laying down of guidelines should not send out a message that the obvious correlation between incidents of communal violence, and the demolitions that follow them, can be blurred by administrative trickery. In many cases backdated eviction notices are produced to justify these demolitions, even as obvious gloating over the inhabitants' plight betrays the political and communal motive. The idea of digitalising eviction notices may address the problem of backdated notices, but it may not be possible to make the transition in all parts of the country. The real question that the Court should grapple with is whether the claim that only encroachments are being demolished is enough to justify the egregious violation of the rule of law and absence of due process in several recent instances in Uttar Pradesh, Madhya Pradesh, Haryana and Delhi. It ought to be clear by now that the ruling party in these States seeks to gain political mileage by giving the impression that the regime is acting sternly against anti-social elements, even while thinly masking the blatantly communal action by passing it off as an anti-encroachment drive.

दैनिक भास्कर

Date: 04-09-24

क्या इस मामले में 'न्याय' न्यायपालिका तक पहुंचेगा

संपादकीय

आम जनता भी जानती है कि अपराध के तत्काल बाद, नगरीय निकायों और पुलिस द्वारा आरोपी के घर 'बुलडोजर से ढहाना' राज्य - शक्तियों का नया कानूनेतर स्वरूप है। सन् 2017 से यूपी से शुरू हुआ यह 'त्वरित गैर-न्यायिक, प्रतिशोधात्मक' राजकीय कदम कई राज्यों ने गर्व से अंगीकार किया। सुप्रीम कोर्ट में सरकारी तर्क है कि कुछ भी गलत नहीं, क्योंकि यह सिविक कानून के तहत उन निर्माण पर कार्रवाई है, जो मास्टर प्लान और निकाय नियमों का उल्लंघन कर बनाए गए हैं। यूपी की तरफ से सॉलिसिटर जनरल का कहना था कि निर्धारित समय में नोटिस का जवाब न मिलने पर यूपी शहरी प्लानिंग एवं विकास अधिनियम की धारा 27 (1) के तहत ध्वस्तीकरण किया जाता है। ताज्जुब यह है कि यूपी सहित अन्य राज्यों ने भी माना कि अपराधी को केवल कोर्ट से सजा मिलनी चाहिए। तो पेच कहां है? ऐसी कार्रवाई का सामना कर रहे परिवारों ने कई बार आरोप लगाए हैं कि स्थानीय निकाय बुलडोजर वाले दिन बैकडेट में (15 दिन का गैप जरूरी है) नोटिस जारी करती है और ध्वस्तीकरण के ठीक पहले दरवाजे पर चस्पा कर उसका फोटो ले लेती है। शायद ये सरकारें सामान्य नागरिक की समझ को भी इतना कमतर आंकती हैं? दरअसल सुप्रीम कोर्ट ने राष्ट्रव्यापी दिशानिर्देश के लिए सुझाव मांगा है। यह कोर्ट निकायों को आदेश दे सकती है कि वे ध्वस्तीकरण नोटिस की एक प्रति स्थानीय कोर्ट को भी उसी दिन दें, जिस दिन मकान मालिक को दी जाती है। स्थानीय कोर्ट मालिक से भी पूछ ले। इसी धारा के प्रावधान के तहत मालिक पहले चेयरमैन और फिर हाईकोर्ट में अपील कर सकते है। चूंकि यह सुप्रीम कोर्ट का प्रक्रियात्मक आदेश होगा इसलिए इसके अनुपालन के लिए कानून नहीं बदलना होगा। 'न्याय' फिर न्यायपालिका पहुंच जाएगा।

दैनिक जागरण

Date: 04-09-24

एक और कठोर कानून

संपादकीय

ममता सरकार की पहल पर बंगाल विधानसभा ने दुष्कर्मियों को फांसी की सजा के प्रविधान वाला जो विधेयक पारित किया, उससे यौन अपराधी हतोत्साहित होंगे, यह कहना कठिन है। यह मानने के पर्याप्त कारण हैं कि इस विधेयक का

मूल उद्देश्य यह राजनीतिक संदेश देना अधिक है कि ममता सरकार दुष्कर्म के अपराधों के प्रति संवेदनशील है। ममता सरकार को यह संदेश देने की जरूरत इसीलिए पड़ी, क्योंकि कोलकाता के आरजी कर मेडिकल कॉलेज में एक प्रशिक्षु महिला डॉक्टर की दुष्कर्म के बाद हत्या के मामले ने यही जताया कि बंगाल पुलिस और सरकार ने इस प्रकरण में गैर जिम्मेदारी और संवेदनहीनता का परिचय दिया। बंगाल विधानसभा की ओर से आनन-फानन पारित किए गए विधेयक में कहा गया है कि यदि दुष्कर्म के किसी मामले में पीड़िता की मौत हो जाती है या फिर वह कोमा में चली जाती है तो अपराधी को फांसी की सजा दी जाएगी। पहले यह कहा गया था कि ऐसे मामलों में सजा सुनाए जाने के 10 दिन के अंदर दोषी को फांसी दे दी जाएगी, लेकिन पारित किए गए विधेयक में इसका उल्लेख नहीं है। कोई भी समझ सकता है कि यह इसीलिए नहीं है, क्योंकि ऐसा संभव नहीं था। तय न्याय प्रक्रिया का पालन किए बिना फांसी की सजा पर अमल संभव नहीं। किसी को फांसी की सजा तभी दी जा सकती है, जब उच्चतर न्यायपालिका इसकी अनुमति दे दे। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि देश को दहलाने वाले निर्भया कांड के दोषियों को फांसी की सजा देने में आठ वर्ष लग गए थे।

कई राज्यों में कठोर कानूनों के चलते दुष्कर्म और हत्या के मामलों में निचली अदालतों की ओर से अपराधियों को फांसी की सजा तो रह-रहकर सुना दी जाती है, लेकिन उस पर अमल मुश्किल से ही हो पाता है। एक आंकड़े के अनुसार पिछले 20 वर्षों में दुष्कर्म और हत्या के मामलों में केवल पांच अपराधियों को फांसी की सजा दी जा सकी है। भले ही ममता बनर्जी यह कह रही हों कि अपराजिता महिला-बाल सुरक्षा विधेयक भारतीय न्याय संहिता से अधिक कठोर है, लेकिन प्रश्न यह है कि क्या इस विधेयक के कानून बन जाने पर वह माहौल कायम हो सकेगा, जिसमें महिलाएं खुद को सुरक्षित महसूस करें और आरजी कर मेडिकल कॉलेज जैसी घटनाएं न हो सकें? इसके प्रति इसलिए आश्वस्त नहीं हुआ जा सकता, क्योंकि आरजी कर मेडिकल कॉलेज की घटना पर देशव्यापी रोष-आक्रोश के बाद भी प्रतिदिन दुष्कर्म के समाचार आ रहे हैं। ये समाचार यही बताते हैं कि संबंधित कानूनों को दुरुस्त करने और पुलिस को अपना रवैया सुधारने के साथ ही समाज को भी चेतने की जरूरत है। आखिर समाज अपने हिस्से की जिम्मेदारी कब निभाएगा और इस दिशा में राजनीतिक दलों और सरकारों की ओर से क्या कदम उठाए जा रहे हैं? यह प्रश्न इसलिए, क्योंकि राजनीति ही समाज को सबसे अधिक प्रभावित करती है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 04-09-24

सुरक्षा पर सियासत

संपादकीय

सारे राजनीतिक भेद-मतभेद जैसे अचानक ही खत्म हो गए। मंगलवार को जब पश्चिम बंगाल विधानसभा में महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा के लिए अपराजिता विधेयक पेश किया गया, तो पक्ष-विपक्ष सब एक साथ खड़े दिखाई दिए। विधेयक को सर्वसम्मति से पास किया गया। ममता बनर्जी ने विपक्ष के विधायकों से कहा कि वे राज्यपाल से इस

विधेयक को स्वीकृति देने का अनुरोध करें, ताकि इसे आगे राष्ट्रपति के पास भेजा जा सके। विपक्ष के नेता भाजपा के शुभेंदु अधिकारी ने तो राज्यपाल से इसकी अपील भी कर दी। पिछले कुछ दिनों में कोलकाता की सड़कों ने एक डॉक्टर के बलात्कार और हत्या के बाद जिस तरह की राजनीति और गुंडागर्दी देखी है, उसके बाद इस तरह की आम सहमति एक उम्मीद बंधा सकती थी, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। विधेयक भले ही सर्वसम्मति से पास हुआ हो, पर जिस तरह की राजनीति वहां दिखी, वह किसी भी तरह से आश्वस्त करने वाली नहीं थी। मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने तो दूसरे राज्यों में हुए बलात्कारों की पूरी फेहरिस्त ही पेश कर दी। वह इतने पर ही नहीं रुकीं। उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, गृह मंत्री अमित शाह और तमाम राज्यों के मुख्यमंत्रियों से इस तर्क के साथ इस्तीफे की मांग कर डाली कि वे महिलाओं को सुरक्षा देने में नाकाम रहे हैं। याद रहे, भाजपा नेता कोलकाता अस्पताल बलात्कार और हत्या के मामले में कई दिनों से ममता बनर्जी से इस्तीफे की मांग कर रहे हैं। सो, मुख्यमंत्री ने सोचा कि इसका राजनीतिक जवाब थोक भाव में इस्तीफे की मांग कर ही दिया जा सकता है।

अब आते हैं अपराजिता विधेयक पर। निश्चित तौर पर इसमें कुछ बातें बहुत अच्छी हैं। यह विधेयक इसे स्पष्ट तौर पर कहता है कि अगर किसी का बलात्कार करके हत्या कर दी जाती है या फिर बलात्कारी उसे पूरी तरह अक्षम बना देता है, तो इसके दोषी को मृत्युदंड ही दिया जाना चाहिए। ठीक यहीं पर हमें थोड़ा रुककर 2012 के निर्भया कांड को याद कर लेना चाहिए, जिसके बाद बलात्कार से संबंधित कानूनों में बदलाव के लिए जस्टिस जेएस वर्मा आयोग की स्थापना हुई थी। इस आयोग ने बहुत बड़े विमर्श के बाद बहुत ही कम समय में अपनी रिपोर्ट दी थी। इसी रिपोर्ट के आधार पर केंद्र ने जो कानून बनाया, उसमें दोषी को अधिकतम सजा के तौर पर मृत्युदंड का प्रावधान था। मगर क्या हुआ? अगर हम निर्भया कांड के दोषियों को छोड़ दें, तो बाद में किसी भी बलात्कारी को कभी मृत्युदंड नहीं दिया गया। इस विधेयक में एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि अगर किसी को बलात्कार के लिए आजीवन कारावास होता है, तो उसे इस सजा के दौरान किसी भी तरह की पेरोल या फरलो नहीं दी जाए। हाल-फिलहाल के बहुत सारे संदर्भ बताते हैं कि कानून में इस तरह के प्रावधान कितने जरूरी हैं।

कानूनों में खामियां हो सकती हैं, लेकिन उससे ज्यादा खतरनाक है बलात्कार पर होने वाली राजनीति। राजनीति में बलात्कार को अक्सर राजनीतिक औजार की तरह इस्तेमाल किया जाता है। जो कोलकाता के कांड पर हल्ला मचा रहे हैं, वे बदलापुर की घटनाओं पर चुप्पी लगा जाते हैं और जो बदलापुर पर चिल्ला रहे हैं, वे कोलकाता की वारदात पर कुछ नहीं बोलते। बलात्कार की हर वारदात के बाद जनता का गुस्सा राजनीति के इन आरोपों-प्रत्यारोपों के आगे दम तोड़ देता है। बलात्कार पर राजनीति नहीं होनी चाहिए। इसे लेकर कोई आम सहमति बनाने की कोशिश क्यों नहीं होती?

Date: 04-09-24

आरोपी से मत छीनिए उसके अधिकार

अश्विनी कुमार, (अधिवक्ता व पूर्व केंद्रीय मंत्री)

यह देखते हुए कि हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली को लेकर देश भर में एक खास तरह का खौफ बना हुआ है, गंभीर आपराधिक मामलों में भी आरोपियों को जमानत देने का सुप्रीम कोर्ट का हालिया फैसला स्वागतयोग्य माना जाना

चाहिए। इस फैसले ने विचाराधीन कैदियों में यह भरोसा पैदा किया है कि उनकी स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और निजता का अब अनुचित हनन नहीं हो सकेगा। मनीष सिसोदिया बनाम प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) मामले की सुनवाई करते हुए अदालत ने 9 अगस्त को कहा, संविधानवाद और कानून के शासन का पैरोकार हमें होना चाहिए, जिसकी स्वाभाविक राह स्वतंत्रता है। उसने आगे कहा, जमानत नियम है और जेल अपवाद, जिसमें निष्पक्ष व त्वरित सुनवाई का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार में निहित है।

सिसोदिया मामले में सांविधानिक स्थिति की व्याख्या करने के बाद अदालत ने कविता बनाम ईडी (27 अगस्त, 2024) के मामले में भी यही बात दोहराई कि अनुच्छेद 21 के तहत मिला व्यक्तिगत स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार वैधानिक प्रतिबंधों से ऊपर है और आरोपी को बिना सुनवाई के लंबे समय तक जेल में रखकर उसे बिना मुकदमे के सजा नहीं दी जानी चाहिए। प्रेम प्रकाश बनाम भारत संघ (28 अगस्त, 2024) मामले में भी न्यायालय ने यही कहा कि व्यक्ति की स्वतंत्रता सदैव नियम है और इससे वंचित किया जाना अपवाद। अदालत ने निर्णय सुनाते हुए कहा कि मुकदमे के शीघ्र पूरा होने की उम्मीद में किसी व्यक्ति को असीमित समय के लिए सलाखों के पीछे रखना अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकारों का हनन करना होगा। पूर्व के इन फैसलों के अनुरूप ही 2 सितंबर, 2024 को विजय नायर बनाम ईडी केस में दो सदस्यीय पीठ ने लंबे समय तक जेल में रहने और जल्द ट्रायल होने संबंधी आरोपी के अधिकार के आधार पर विजय नायर को जमानत दी है।

बहरहाल, उल्लेखनीय यह भी है कि धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (पीएमएलए) की धारा 45 की व्याख्या करते हुए अदालत ने प्रेम प्रकाश को राहत देते समय 'विश्वास करने के उचित आधार' की वकालत की। उसने कहा कि अदालत को 'जांच के दौरान एकत्र की गई सामग्रियों के आधार पर' यह देखने की जरूरत है कि 'क्या आरोपी के खिलाफ वास्तव में कोई मामला बनता है'? पीएमएलए के तहत हिरासत में लिए गए आरोपी के बयान के संबंध में अदालत ने दोहराया कि हिरासत में लिया गया 'शख्स ऐसा नहीं होता, जिसे स्वतंत्र दिमाग से काम करने वाला माना जा सके' और आरोपी के खिलाफ ऐसे बयान को स्वीकार्य बनाना बेहद असुरक्षित होगा, क्योंकि इस तरह की कार्रवाई निष्पक्षता और न्याय के सभी सिद्धांतों के खिलाफ होगी। अदालत के इस तरह के रुख से सरकार को भी सहमत होना चाहिए और कानून की समीक्षा करते हुए ऐसे प्रावधान करने चाहिए कि बिना जमानत यदि आरोपी को हिरासत में रखा जाता है, तो उसकी एक उचित अधिकतम मियाद हो।

जाहिर है, अदालत ने संविधान की प्रधानता और अनुच्छेद 21 के महत्व को स्थापित किया है। नारकोटिक ड्रग्स ऐंड साइकोट्रॉपिक सब्स्टांसेज ऐक्ट, 1985 (एनडीपीएस ऐक्ट) के तहत दर्ज फ्रैंक विट्स बनाम नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो और अन्य तीन के मामले में 8 जुलाई, 2023 को अदालत ने फैसला सुनाते हुए कहा था कि जब तक अभियुक्त को दोषी नहीं ठहराया जाता, तब तक उसे निर्दोष मानना चाहिए और जमानत की जो शर्तें अभियुक्त की निजता के अधिकार का उल्लंघन करती हैं, वे अनुच्छेद 21 का उल्लंघन मानी जाएंगी। उसने आगे कहा कि जमानत की ऐसी शर्त, जिसका पालन करना अभियुक्त के लिए संभव नहीं है, वह नहीं लगाई जा सकती। इस प्रकार, कानून में आवश्यक सुरक्षा उपायों की बात कहकर सर्वोच्च न्यायालय ने स्वाभाविक ही अभियुक्त के मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिए निर्णायक हस्तक्षेप किया है। प्रतिष्ठित न्यायाधीशों ने यह सुझाते हुए न्यायिक दूरदर्शिता का ही परिचय दिया है कि कानून के इरादे तो नेक हैं, पर उनके पालन में विकृतियां हैं और सांविधानिक आदेशों का पालन न करने से राष्ट्र भ्रष्टाचार और अपराध से लड़ने के लिए आगे नहीं बढ़ सकेगा।

तर्क और मौलिक अधिकारों की पवित्रता पर आधारित ये अदालती फैसले समाज में एक स्थायी ताकत के रूप में कानून के प्रति लोगों का सम्मान बढ़ाने का काम करेंगे। इनमें आश्वस्त करने वाला एक संदेश निहित है कि अन्याय के खिलाफ आवाज बेशक कमजोर हो, लेकिन वह हर हाल में सुनी जाएगी और अविवेकी रूप से लागू किए गए कानून में न्याय उलझकर नहीं रहने पाएगा। सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियां न्यायिक तौर पर यह भी पुष्ट करती हैं कि गैर-जवाबदेह ताकत और स्वतंत्रता के बीच अंतर्निहित तनाव में समाधान स्वतंत्रता के पक्ष में ही होगा।

न्यायालय ने न्याय को ही सही ठहराया है, जिसकी महिमा कानून के सबसे प्रिय सिद्धांतों में भी शुमार है- फिएट जस्टिटिया रुआट कैलम (लातीन मुहावरा), जिसका अर्थ है कि चाहे आकाश ही क्यों न गिर जाए, लेकिन न्याय किया जाना चाहिए, यानी परिणाम की परवाह किए बगैर न्याय होना चाहिए। जमानत पर आया फैसला एडमंड बर्क सहित तमाम दार्शनिकों के विचारों को प्रतिध्वनित करता है कि स्वतंत्रता 'अविनाशी समाज के महान आदिम अनुबंध का एक हिस्सा है, जो सभी भौतिक और नैतिक प्रकृतियों को उनके नियत स्थान पर रखता है।' (एडमंड बर्क, रिफ्लेक्शंस ऑफ द रिवॉल्यूशन इन फ्रांस, 1866)

हालांकि, सांविधानिकता का मकसद तभी सबसे बेहतर तरीके से पूरा हो सकता है, जब अदालत अपने मौलिक आदेशों का क्रियान्वयन हर हाल में सुनिश्चित करे, ताकि सभी के लिए स्वतंत्रता और सम्मानपूर्ण जीवन का जो वायदा हमारा जीवंत संविधान करता है, उसे हासिल किया जा सके। यह वह युग है, जिसमें सांविधानिक मर्यादा का अभाव दिखता है। ऐसे में, संविधान का उल्लंघन करने वालों को आईना दिखाने के साथ-साथ अदालत को यह भी आश्वस्त करना होगा कि महज आरोप लगा देने मात्र से किसी के मान के साथ खिलवाड़ न हो सकेगा। उम्मीद है, न्यायालय का यह घोषित स्वतंत्रतावादी दर्शन राजनीतिक दलों को अपनी राजनीति पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करेगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मानवाधिकारों की रक्षा समग्र रूप से लोगों और उनके द्वारा स्थापित संस्थानों का ही सामूहिक दायित्व है।

Date: 04-09-24

स्मार्ट औद्योगिक शहर बिना हमारा काम नहीं चलेगा

चंद्रजीत बनर्जी, (महानिदेशक, सीआईआई)

राष्ट्रीय औद्योगिक गलियारा विकास कार्यक्रम (एनआईसीडीपी) के तहत 12 स्मार्ट औद्योगिक शहर बनाने का भारत का हालिया नीतिगत फैसला बहुत खास है। यह भारतीय विनिर्माण क्षेत्र को बदलने और खूब रोजगार पैदा करने की तैयारी है। यह नीति भारत की निर्यात क्षमताओं को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी और वैश्विक मूल्य शृंखला (जीवीसी) में देश की हिस्सेदारी बढ़ाने में भी मदद करेगी।

भारत के विनिर्माण क्षेत्र ने 2023-24 में सकल मूल्य वर्धित (जीवीए) में 14 प्रतिशत का नाममात्र योगदान दिया, फिर भी इसमें 9.9 प्रतिशत की मजबूत वृद्धि हुई। निर्माण क्षेत्र भी समान दर से बढ़ा, जिसकी जीवीए में नौ प्रतिशत हिस्सेदारी है। साल 2024-25 के केंद्रीय बजट में बुनियादी ढांचे के लिए 11.11 ट्रिलियन रुपये (जीडीपी का 3.4 प्रतिशत) के बड़े आवंटन के साथ-साथ स्मार्ट सिटी मिशन, औद्योगिक गलियारा विकास, राष्ट्रीय एकल खिड़की प्रणाली और एक

जिला एक उत्पाद योजना जैसी सरकारी पहल शामिल है। अब 12 औद्योगिक शहर बनाने की घोषणा सरकार के इसी इरादे की एक कड़ी है। भारत की विदेश व्यापार नीति 2023 के तहत साल 2030 तक एक ट्रिलियन डॉलर के व्यापारिक निर्यात का लक्ष्य रखा गया है। इन 12 शहर परियोजनाओं में से चार निर्माणाधीन हैं, जबकि चार आवंटन के लिए तैयार हैं। ये 12 शहर 10 राज्यों व छह प्रमुख औद्योगिक गलियारों का विस्तार करेंगे।

यह शहर निर्माण कार्यक्रम पीएम गति शक्ति के लक्ष्यों के अनुरूप ही है। इस कार्यक्रम में अमृतसर-कोलकाता औद्योगिक गलियारे में पांच, दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारे में दो और विजाग-चेन्नई, हैदराबाद-बेंगलुरु , हैदराबाद-नागपुर, चेन्नई-बेंगलुरु औद्यागिक गलियारे में एक-एक शहर परियोजना शामिल है। 28,600 करोड़ रुपये के प्रस्तावित बजट से 10 लाख लोगों को प्रत्यक्ष और 30 लाख लोगों को परोक्ष रोजगार मिल सकता है। इसके अलावा नए शहर बनेंगे, तो आसपास के इलाकों को भी आर्थिक फायदा होगा।

देश के विकास के लिए राज्यों की निर्यात-क्षमता को बढ़ाना बहुत जरूरी है। कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जहां भारत उत्पाद निर्माण और निर्यात के लिए बड़े प्रयास कर सकता है। इलेक्ट्रॉनिक सिस्टम्स, डिजाइन विनिर्माण, खाद्य और पेय पदार्थ, फार्मास्यूटिकल्स, कपड़ा और परिधान, ऑटोमोबाइल और ऑटो घटकों, मशीनरी व उपकरण और निर्माण सामग्री जैसे क्षेत्रों में राज्यों की निर्यात-क्षमता को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा। इन नए शहरों में बड़े निवेशकों के साथ ही छोटे निवेशकों को भी पूरी मदद करने की योजना है।

शहर निर्माण की यह पहल 1.5 ट्रिलियन रुपये की समग्र निवेश क्षमता पैदा करने की संभावना रखती है। ध्यान दें कि कुछ प्रस्तावित शहर उन राज्यों में स्थित हैं, जो पहले से ही निर्यात के मोर्चे पर अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं, जैसे महाराष्ट्र और तेलंगाना। अच्छी बात है कि नीति में यह भी ध्यान रखा गया है कि बिहार, उत्तराखंड और उत्तर प्रदेश जैसे कम निर्यात हिस्सेदारी वाले राज्यों को भी शामिल किया जाए। खास बात यह भी है कि यह शहर निर्माण कार्यक्रम भारत के जलवायु लक्ष्यों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। जल को फिर उपयोग लायक बनाना और कूड़ा-कचरा के सही निस्तारण की भी चिंता की गई है। सर्कुलर इकोनॉमी के सिद्धांतों और वॉक-टु-वर्क जैसी अवधारणाओं को भी इस कार्यक्रम में शामिल किया गया है। इसमें अक्षय ऊर्जा का भी पूरा इंतजाम रखने की योजना है। साल 2030 तक क्षमता और 2070 तक शुद्ध-शून्य कार्बन उत्सर्जन का लक्ष्य हासिल करना है। हरित निर्यात को न केवल बढ़ावा देना है, बल्कि हरित मैन्युफैक्चरिंग की स्थायी व्यवस्था करने की योजना है। यदि हमने हरित उत्पादन की चिंता की, तो विश्व स्तर पर हमारे भागीदारों की भी संख्या बढ़ेगी।

जरूरी है कि नए शहरों में उच्च तकनीकी में सक्षम श्रमिकों को आकर्षित करने के लिए पुख्ता बुनियादी ढांचा दिया जाए। स्मार्ट डिजिटल प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाया जाए। एक साथ कई उद्देश्यों को पूरा करने के साथ, भारत की औद्योगिक शहर परियोजनाएं निर्यात और आर्थिक विकास के लिए क्रांतिकारी सिद्ध हो सकती हैं।